शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 दिसम्बर 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

अज्ञेय के काव्य में अलंकार योजना

डॉ.मनमीत कौर
हिंदी विभाग
राधा गोविंद विश्वविद्यालय
रामगढ़, झारखंड, भारत

भूमिका

अलंकारों का विवेचन काव्यशास्त्र का एक महत्वपूर्ण अंग है। इनके क्रमबद्ध विवेचन के पूर्व से ही इनका बिखरा हुआ प्रयोग मिलता है। ऋग्वेद में किए गए आलंकारिक प्रयोग उल्लेखनीय है। विशेष रूप से वे प्रसंग इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं जहां काव्यात्मक शैली का अनुगमन किया गया है। होता (हवन करने वाले) यज्ञों में सम्मिलित होने के लिए देवताओं का आवाहन करते हैं और यजमान को मनोवांछित फल प्राप्त करने के निमित्त उनकी नाना प्रकार से स्तुति करते हैं। इन स्तुतिपरक विभिन्न प्रकार के छंदों में आलंकारिक प्रयोग मिलते हैं। रामायण, महाभारत तथा अन्य परवर्ती संस्कृत काव्यों में भी अलंकारों का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण रहा है।[1] 'आक्सफोर्ड जूनियर इन्साइक्लोपीडिया' के अनुसार अलंकार पाठक की कल्पना शक्ति को इस प्रकार उत्तेजित करते हैं कि जिससे वह वस्तुतः विचारों को अधिक व्यापक रूप में ग्रहण करने में समर्थ हो जाती है।"[2]

अलंकारिकता, शिल्पधर्मिता के लिए एक अपरिहार्य उपादान है। वस्तुतः उस अभिव्यक्ति के लिए भाषा का एक सशक्त एवं प्रभावशाली रूपांतर है। अज्ञेय सम्पूर्ण भाषा को, जिसमें अलंकार भी आ जाते हैं, एक जीवंत व्यवहार के रूप में लेते हैं। उन्हें भाषा का वह रूप पसंद है, जिसमें ताजगी हो तथा जो 'वस्तु' को पूरी ईमानदारी के साथ रूपायित होने में सहायता पहुंचाए। मानवीकरण और विशेषण विपर्यय दो ऐसे अलंकार हैं, जिनके सहारे जड़ और चेतन सभी सहज संचेतित हो उठते हैं।

अज्ञेय के काव्य में अलंकार योजना

अज्ञेय की काव्य भाषा पर टिप्पणी करते हुए विद्वान आलोचक डॉ.रामस्वरूप चतुर्वेदी कहते हैं, "प्रयोगवाद में अज्ञेय के माध्यम से काव्य भाषा का पुनर्सृजन आरंभ होता है। भाषा के सम्बन्ध में अज्ञेय जैसी सावधानी कम ही रचनाकारों ने बरती है। अज्ञेय के प्रशंसक कुछ ऐसे पाठक एवं समीक्षक हैं जो उनके कथ्य से सहमत न होते हुए भी उनकी कला के बहुत बड़े उपासक हैं। संभवतर: वे नहीं जानते कि भाषा का अधिक-से-अधिक सतर्क और सृजनात्मक प्रयोग करके ही अज्ञेय ने अपनी कला को इतना निखारा है। भाषा जितनी सृजनात्मक होगी, कलाकृति उतनी ही विशुद्ध और प्रामाणिक होगी।"[3] वस्तु और शिल्प का संबंध अविभाज्य है। अज्ञेय का मन्तव्य स्पष्ट है कि वस्तु को शिल्प से अलग नहीं किया जा सकता।"[4] काव्य के दो पक्ष स्वीकार्य हैं, भावपक्ष और कलापक्ष। भावपक्ष का सीधा संबंध रागात्मक तत्वों से है, जिनमें संवेदना और अनुभूति ही प्रधान है। वस्तुतः यही

काव्य की आत्मा है। कलापक्ष द्वारा ही भावपक्ष सहृदय पाठक के अंतःकरण को रससिक्त कर रूपहीन भावों को एक निश्चित स्वरूप प्रदान करता है। अर्थात् कलापक्ष भावपक्ष को वहन करने का एक माध्यम है। शैली की व्यापकता के अंतर्गत अलंकार, छंद, रस एवं काव्य के अन्य कई उपादान समाविष्ट होकर कलापक्ष की सारी सौंदर्य.सृष्टि में वृद्धि करते हैं।

अज्ञेय 'वस्तु' के साथ तादात्म्य स्थापित करने वाले एक जीवंत कलाकार के रूप में प्रतिष्ठापित हैं।"[5] यही कारण है कि उनके यहां आग्रहपूर्वक आलंकारिक शब्द योजना की बजाय सहज संप्रेष्य अलंकारों का प्रयोग हुआ है जिससे उनका कथ्य अधिक प्रभावशाली बन पड़ा है।

मानवीकरण अलंकार आधुनिक कवियों का सबसे प्रिय अलंकार रहा है। अज्ञेय की कविताओं में बड़ी कलात्मकता के साथ इसका प्रयोग हुआ है। 'मानवीकरण' को परिभाषित करते हुए हिंदी साहित्य कोश में लिखा है 'अमानव' में 'मानव गुणों के आरोप करने की साधारण प्रवृत्ति या प्रक्रिया को मानवीकरण कहा जाता है।"[6] अज्ञेय की 'हमने पौधे से कहा', 'कतकीपूनो, असाध्य वीणा, ऋतुराज, खुल गई नाव जैसी अनगिनत कविताओं में इस अलंकार का सुंदर प्रयोग हुआ है। जैसे 'मलय का झोंका बुला गया', 'पीपल की सूखी खाल स्निग्ध हो चली', 'हँस उठी कचनार की कली', 'टेसुओं की आरती सजा के बन गई वधू वनस्थली' 'ऊषा जाग उठी प्राची में', 'पूर्णिमा की चांदनी सोने नहीं देती', 'स्मृति की सूखी सजा रूआँसी एक सहेली होगी', 'ऊँघ रहे हैं तारे', 'यह दीप अकेला स्नेह भरा है गर्व भरा मदमाता', 'तरंग पंखयुक्त वीणा पर पवन ने भर उमंग गाया', 'घाटी की पगडंडी लजायी और ओट हुई, 'सूनी-सी साँस एक दबे पांव मेरे कमरे में आई थी', 'पथ सोया ही रहा', 'किनारे के क्षुप चौके नहीं न काँपी डाल', 'न कोई पत्ती दरकी', 'बनखंडी में सधेखड़े चीड़ जागकर सिहर उठे', 'सनसना गए कितनी बरसातों कितने खद्योतों ने आरती उतारी' आदि पंक्तियों में मानवीकरण अलंकार ने विलक्षण चमत्कार उत्पन्न किया है।"[7]

विशेषण विपर्यय अंग्रेजी के ट्रांसफर्ड एपीथेट के पर्याय के रूप में व्यवहृत होता है। यह अंग्रेजी काव्यशास्त्र का एक अलंकार है, जिसमें व्यक्ति के विशेषण को उससे सम्बद्ध वस्तु का विशेषण बना दिया जाता है।"[8] छायावाद और उसके बाद के हिंदी काव्य में (अज्ञेय के यहाँ भी) विशेषण विपर्यय का व्यवहार बहुलता से हुआ है।'साम्राज्ञी का नैवेद्य दान' (प्याला जीवन का), 'खुल गई नाव' (मूर्छित व्यथा में) आदि कविता विशेषण विपर्यय अलंकार के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। 'लजाती साँझ, 'संकल्प मेरा द्रवित, आहुत, ममतामयी बाँहें', 'बांझ अनुकम्पा', 'मुखर तपती वासनायें', 'गोपन लज्जा में लिपटा सहमा स्वर, 'ओटती कानी घृणा, 'गंध प्रवण शीतलता', 'स्पर्श छुअन', 'जब तारों की तरल कँपकँपी स्पर्शहीन झरती है', आदि पदों में विशेषण विपर्यय अलंकार का सौंदर्य विद्यमान है। साथ ही 'पंक्तियों पर बूंदों की पटापट' 'रेतीले कगार का गिरना छपछडाप', 'मेंड़ से बहते जल की छुलछुल' 'संध्या गोधूलि की लघु टुनटुन', 'घरघराहट चढ़ती बहिया की', झंझा की फुफकार', 'पेड़ों का अरराकर टूट-टूट कर गिरना', 'गर्जन घुर्घुट' चीख, भूँक, हुक्का, 'चिचियाहट' आदि पंक्तियों में ध्वन्यर्थ व्यंजना अलंकार का माधुर्य विद्यमान है।"[9]

अलंकार योजना के अंतर्गत उपमेय-उपमानों का विशिष्ट महत्व है। प्रयोगवादी दौर में नए उपमानों को काव्य में लाने पर बल दिया गया,

जिसके प्रणेता अज्ञेय को माना गया। 'कलगी बाजरे की' इस संदर्भ में उनकी प्रसिद्ध कविता है, जिसमें वे उपमानों के मेले हो जाने की बात करते हैं। अपनी कविताओं में अज्ञेय ने नए-नए उपमानों का सुंदर प्रयोग किया है। साधारणतया 'अप्रस्तुत' शब्द 'उपमान' का पर्याय है। आज अनेक समीक्षक 'उपमान' के स्थान पर 'अप्रस्तुत' का अधिक प्रयोग करने लगे हैं। इसका कारण यह है कि 'अप्रस्तुत' से अधिक व्यापक अर्थ की प्रतीति होती है।"[10] उपमा में प्रस्तुत की अप्रस्तुत से तुलना की जाती है तथा रूपक में प्रस्तुत पर अप्रस्तुत का आरोप कर दिया जाता है। अवगुंठन-सा लालिमा गगनांबर, पराग-सी स्मृति धूल, दहकते दाड़िम पुहुपसे ओठ, उमंगों-सी डगर, सुलगे अंगार-सा गुड़हल, दर्द की रेखा-सी नदी, अफराये डांगर-सी रेलें, अंगारे-सा भगवान सामानव, सरि, सागर, सोते, निर्झर-सा जीवन आदि में उपमा की तथा सूरज का जपा फूल, बादल-सेज, धूप-कनक, रूप. केकी, आलोक कशा, नभ का कच्चा आंगन, महाशून्य का शिविर, स्वर-तार, जिंदगी का रेशतराँ, अंधकार का सागर, भावों का अनंत क्षीरोदधि, शब्द-शेष, आलोक की अनी आदि में रूपक की योजना द्रष्टव्य है। इनमें आए हुए अप्रस्तुतों में नयापन संदर्भ को लेकर है। प्रस्तुत की भाव-व्यंजकता को बढ़ाने में वे सक्षम हैं तथा कवि की कल्पना-प्रवणता को सूचित करते हैं।

जहाँ प्रस्तुत में अप्रस्तुत की संभावना हो वहां उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। 'राजमुकुट सहसा हल्का हो आया था, मानो हो फूल सिरिस का, 'ओस-बूँद की ढरकन इतनी कोमल, तरल कि झरते-झरते मानो हरसिंगार का फूल बन गई 'दूर पहाड़ों से काले मेघों की बाढ़ हाथियों का मानो चिंघाड़ रहा हो यूथ' आदि में उत्प्रेक्षा की स्थिति देखी जा सकती है।"[11]

इसी तरह 'उड़ चल हारिल लिए हाथ में यही अकेला ओछा तिनका' पंक्ति में अन्योक्ति अलंकार के द्वारा, 'हरी बिछली घास, दोलती कलगी छरहरी बाजरे की' में रूपकातिशयोक्ति अलंकार के द्वारा 'लजाती साँझ के नभ की अकेली तारिका या शरद के भोर की नीहार न्हायी कुंई' में संदेह अलंकार के द्वारा, 'कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है' में दृष्टांत अलंकार के द्वारा, यह दीप यह मधु है यह गोरस यह अंकुर यह प्रकृत' आदि में उल्लेख अलंकार के द्वारा वैसी शीतल अनल-शिखा न फिर जली' में विरोधाभास अलंकार के द्वारा, 'अरे अंतःसलिला है रेत, अनगिनत पैरों तले रौंदी हुई अविराम पड़ी सज्जाहीन, घूसर-गौर, निरीह और उदार' में समासोक्ति अलंकार के द्वारा अपने कथन में चारुता और रमणीयता की सृष्टि की है।"[12] अज्ञेय की 'असाध्य वीणा' तो अलंकार संयोजन का सर्वश्रेष्ठ नमूना है। छेकानुप्रास, उपमा, संदेह, पुनरुक्तिप्रकाश, उल्लेख, अनुप्रास, मानवीकरण, वीप्सा, दीपक, उत्प्रेक्षा, रूपक, विरोधाभास, मालोपमा जैसे कई अलंकारों की सुंदर छटा इस कविता में विद्यमान है। इसके अतिरिक्त आज थका हिय हारिल मेरा ('हिय हारिल' में रूपक अलंकार), बावरा अहेरी (सूर्य को अहेरी मानकर पूरा चित्र खींचा गया सांगरूपक अलंकार), साम्राज्ञी का नैवेद्य दान (वहीं-वहीं पद में. पुनरुक्तिप्रकाश और वीप्सा अलंकार, प्याला जीवन का'. विशेषण विपर्यय अलंकार), आज तुम शब्द न दो (रंध्र-रंध्र से' पद में. पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार) बड़े शहर का साक्षात्कार (जो भुला देता भूल गए होने को. विरोधाभास अलंकार), ना जाने केहि भेस (मद में' द्विअर्थ मदिरा और अहंकार

होने से श्लेष अलंकार) आदि कविताओं में भी अलंकारों का सुंदर समायोजन देखा जा सकता है।

निष्कर्ष

एक संस्कारी एवं सर्जनात्मक काव्य भाषा के निर्माण के लिए जितना प्रयत्न अज्ञेय ने किया संभवत: और किसी नये कवि ने नहीं किया। उन्होंने अभिव्यक्ति की समस्या को कवि के संदर्भ में ही नहीं प्रत्येक कविता के संदर्भ में देखा है, किंतु वे इससे निराश नहीं हुए हैं। वे मानते हैं कि जो सर्जक अभिव्यक्ति के लिए जूझेगा, भाषा उसे निराश नहीं करेगी। भाषा कल्पवृक्ष है जो उससे आस्थापूर्वक माँगा जाता है भाषा वह देती है।"[13] इसी क्रम में अज्ञेय ने अनेक सुंदर उपमानों को गढ़ा है। किसी कवि की सफलता इस बात में निहित नहीं है कि उन्होंने कितने अलंकारों या उपमानों का प्रयोग किया बल्कि उससे इतर पाठकों की कल्पना शक्ति को कितना उदबुद्ध किया, यह उसकी सफलता का पैमाना है। अज्ञेय का अलंकार विधान अभिव्यक्ति की प्रखरता को निखारने में सहायक सिद्ध हुआ है। अज्ञेयइस कसौटी पर खरे उतरने वाले कवि हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

1 चतुर्वेदी डॉ देवनाथ, मध्ययुगीन हिंदी काव्य में प्रयुक्त काव्यरूढियों का अध्ययन, हिंदी भवन, विश्व भारती, शांति निकेतन, संस्करण 1981, पृष्ठ 94

2 मिश्र डॉ सावित्री, अज्ञेय की गद्य शैली, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 1984, पृष्ठ 13

3 ऋषिकल्प रमेश, अज्ञेय की कविता : परम्परा और प्रयोग, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण. 2008, पृष्ठ 207

4 प्रसाद डॉ राजेंद्र, अज्ञेय : कवि और काव्य, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2006, पृष्ठ 175

5 शर्मा डॉ बालक राम, अज्ञेय के गद्य साहित्य का शैली वैज्ञानिक अध्ययन, अमित प्रकाशन, गाजियाबाद, संस्करण 1977, पृष्ठ 159

6 वर्मा डॉ धीरेंद्र (प्रधान सं.), हिंदी साहित्य कोश, भाग-1, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, संस्करण 2015, पृष्ठ 494

7 सक्सेना द्वारिकाप्रसाद, हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, संस्करण 1983, पृष्ठ 444

8 वर्मा डॉ धीरेंद्र (प्रधान सं.) हिंदी साहित्य कोश, भाग-1, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, संस्करण 2015, पृष्ठ 631

9 सक्सेना द्वारिका प्रसाद, हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, संस्करण 1983, पृष्ठ 444

10 प्रसाद डॉ राजेंद्र, अज्ञेय : कवि और काव्य, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2006, पृष्ठ 196

11 वही, पृष्ठ 200-201

12 सक्सेना द्वारिका प्रसाद, हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, संस्करण 1983, पृष्ठ 443-444

13 प्रसाद डॉ राजेंद्र, अज्ञेय : कवि और काव्य, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2006, पृष्ठ 203

डॉ मनमीत कौर